International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 08-05-2020; Accepted: 21-05-2020; Published: 09-06-2020
www.hindijournal.com
Volume 6; Issue 3; 2020; Page No. 45-50

भारत के परिप्रेक्ष्य में बहुभाषिकता: एक अभिशाप या वरदान ?

मो० फैसल

पीएचडी शोधार्थी, आई०ए०एस०ई०, शिक्षा-संकाय, जामिया मिल्लिया इस्लामिया, दिल्ली, भारत

सारांश

भारतीय समाज एक ऐसा बहुभाषिक समाज है, जहां प्राचीन काल से ही समाज में बहुत सारी भाषाओं का उपयोग होता आ रहा है। अथर्ववेद में कहा भी गया है कि यहां बहुत सारी भाषाएं बोलने वाले, नाना धर्मो का पालन करने वाले बहुत से लोग रहते है। यही विशेषता भारत को दुनिया में एक विशिष्ट और उदार राष्ट्र बनाती है परन्तु यह भी सत्य है कि विश्व में अनेक ऐसे देश हैं जिन्होंने निज भाषाओं को आधार बनाकर ही अपने देश व समाज का विकास किया है और जो अपनी भाषा पर अभिमान करके एकभाषावाद को प्रोत्साहित करते हैं। आमतौर से, भारत जैसे विकासशील देशों की बहुभाषिकता को विकसित देशों के नियमानुसार एक समस्या के रूप में देखा जाता है तथा यह तर्क दिया जाता है कि बहुत सारी भाषाएं, बहुत से धर्म, जातियां देश की एकता व अखंडता को तोड़ती हैं। ऐसे में भारत जैसे देश में, जहां विभिन्न धर्मों, संस्कृतियों, भाषा-बोलियों से संबंधित लोग निवास करते हैं, यहां भाषा की विविधता एक समस्या के रूप में प्रतीत होती है, विशेषकर जब बात राष्ट्रभाषा व शिक्षा के माध्यम भाषा की आती है। अतः प्रस्तुत शोध आलेख में इस बात को जानने का प्रयास किया गया है कि क्या वास्तव में भारतीय परिप्रेक्ष्य में भाषाई विविधता/बहुभाषिकता एक समस्या के रूप में उभरकर हमारे सामने आती है या इसको वर्तमान भूमंडलीकरण के युग में एक संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए ?

मूल शब्द: समाज, भारतीय, बहुभाषिक, भाषाएं

प्रस्तावना

हम जानते है कि भाषा हमारे भावों, विचारों या इच्छाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम होती है। प्रत्येक समाज अपने विचारो का आदान-प्रदान करने के लिए भाषा का ही आश्रय लेता है। प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डॉ० बाबूराम सक्सेना ने बड़े ही सरल शब्दों में भाषा के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए लिखा है- "वह साधन जिसके द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपने भाव, विचार या इच्छा प्रकट करता है, भाषा कहलाती है।" कहना अनुचित न होगा कि भाषा के बिना मनुष्य अपूर्ण है। भाषा ही मानव विकास की जननी है। हमको ज्ञात है कि मानव जाति के विकास में विस्थापन/पलायन का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से ही मनुष्य ने युद्ध, मैत्री, व्यापार आदि के आधार पर विभिन्न देशों व समाजों से संबंध स्थापित किये है, परिणामस्वरुप प्रारम्भ से ही मनुष्य विभिन्न देशों, समाजों, भाषाओं के संपर्क में आता रहा है लेकिन आज विज्ञान की प्रगति के साथ दुनिया बहुत छोटी हो गई है और प्रवास की प्रवृत्ति काफी बढ़ गई है। अधिकांश देशों में दूसरे देशों के लोग जाकर रहने लगे हैं। उनकी भाषाएं भिन्न-भिन्न है परन्तु कार्यकलाप की प्रमुख भाषा उन देशों की अपनी भाषा या अंग्रेज़ी है। इंग्लैंड, अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया में रहने वाले प्रवासियों के घर के भीतर की

भाषा कोई भी ही लेकिन कार्य और व्यवहर की भाषा अंग्रेज़ी ही होती है। यहां के काफी लोग भले ही एक से अधिक भाषाएं जानते हो लेकिन उन्हें उस अर्थ में बहुभाषी देश नहीं कहा जा सकता जिस अर्थ में भारत एक बहुभाषी देश है क्योंकि वैसे तो अधिकांश समाजों अथवा देशों में एक से अधिक भाषाओं को बोलने वाले मिलते हैं लेकिन बहुभाषिकता को लेकर सब देशों की स्थिति समान नहीं है। वास्तव में बहुभाषिक समाज का अर्थ है - एक ऐसा समाज जिसमें एक से अधिक भाषाएं प्रचलित हों यानी जहां के लोग एक से अधिक भाषाएं बोलते हों। यहां एक से अधिक भाषाएं बोलने का अर्थ कई तरह से लिया जा सकता है – (i) वह समाज जिसमें लोगों को एक से अधिक भाषाएं आती हों, (ii) वह समाज जहां लोग भिन्न-भिन्न भाषाएं बोलते हों तथा (iii) वह समाज जहां विभिन्न प्रयोजनमूलक कार्यों, शिक्षा तथा साहित्य के क्षेत्र में विभिन्न भाषाएं प्रयुक्त होती हों। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि ऊपर वर्णित तीनो स्थितियों में से प्रथम दो अधिकांश बहुभाषी समाजों में मिलती है लेकिन तीसरी कुछेक समाजों में ही पाई जाती है और भारतीय समाज उनमें से एक है। यदि हम भारत के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो हम पाएंगें कि भारत सम्पूर्ण विश्व में संभवतः सर्वाधिक विविधताओं वाला देश है। ये विविधताएं भौगोलिक होने के साथ-साथ धार्मिक, सांस्कृतिक व भाषाई भी हैं। भाषाई विविधता की दृष्टि से तो भारत एक अद्‌भुत देश के रूप में उभर कर सामने आता है। विस्तृत भू-भाग वाले इस देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से ब्रह्मपुत्र तक हजारों सालों से अनेक समृद्ध भाषाएं व बोलियां बोली समझी जाती रहीं हैं। सन् 1971 ई० की भाषाई जनगणना के अनुसार, भारत में लगभग 1652 मातृभाषाएं देश के विभिन्न क्षेत्रों में बोली-समझी जाती है, जिनकी अपनी-अपनी महत्ता, विशिष्ट शब्द-भंडार एवं साहित्य है। इसीप्रकार, भारतीय संविधान की 8 वी अनुसूची में 22 भारतीय भाषाओं को शामिल किया गया है जो इसप्रकार हैं- पंजाबी, संस्कृत, गुजराती, हिंदी, उर्दू, सिंधी, कश्मीरी, कन्नड़, डोंगरी, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, असमिया, बंगाली, बोडो, मराठी, मैथिली, नेपाली, उड़िया, संथाली, तमिल, तेलुगु। यही कारण है कि भारत में एक कहावत बहुत प्रसिद्ध है- “चार कोस पे पानी बदले आठ कोस पे वाणी।“ यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि भारत की यह भाषाई-विविधता हमारी दुर्बलता न होकर हमारी शक्ति व भाषाई समृद्धता की प्रतीक है, परंतु कभी-कभी यही भाषाई विविधता हमारे लिए एक समस्या के रूप में उभरकर सामने आती है, विशेषकर जब बात राष्ट्रभाषा व शिक्षा के माध्यम भाषा की आती है। आमतौर से भारत जैसे विकासमान देशों की बहुभाषिकता को विकसित देशों के नियमानुसार एक समस्या के रूप में चित्रित किया जाता है तथा यह भी कहा जाता है कि बहुत सारी भाषाएं, बहुत से धर्म, जातियां देश की एकता व अखंडता को तोड़ती है। अतः प्रस्तुत शोध आलेख में इसी बात को चर्चा का विषय गया है कि क्या वास्तव में भारतीय परिप्रेक्ष्य में भाषाई विविधता/बहुभाषिकता एक समस्या के रूप में उभरकर हमारे सामने आती है या इसको एक संसाधन के रूप में देखा जाना चाहिए?

बहुभाषिकता क्या है ?

बहुभाषिकता का शाब्दिक अर्थ होता है- अनेक भाषाओं का जानकार होना या किसी राष्ट्र अथवा समाज में विविध भाषाओं के प्रयुक्त होने की स्थिति। हिंदी सिनेमा का यह लोकप्रिय गीत तो हम सभी ने सुना ही होगा-

"अंग्रेज़ी में कहते हैं के - आई लव यू ,
गुजराती मा बोले तने प्रेम करूं छू,
बंगाली में कहते हैं - अमी तुमाके भालो बासी,
और पंजाबी में कहते हैं - तेरे बिन मर जावां, मै तेनू प्यार करना, तेरे बिन नैयो लबडी……."

वास्तव में यही गीत भारत के बहुभाषिक परिदृश्य की झलक को स्पष्ट कर देता है। इसीप्रकार, हमने दूरदर्शन पर एक अन्य प्रसिद्ध गीत "मिले सुर मेरा तुम्हारा, तो सुर बने हमारा………" भी देखा-सुना होगा, जिसको गाते हुए

अनेक जाने माने चेहरे दिखाई देते हैं। फिर इन्हीं पंक्तियों को कई भाषाओं में अनेक बार दोहराया जाता है। वास्तव में यह गीत भारत की सांस्कृतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय एकता का गीत है जो कई भाषाओं में प्रस्तुत होकर ही संपूर्णता पाता है। इसप्रकार सरल शब्दों में, हम कह सकते है कि एक से अधिक भाषाओं के प्रति सम्मान का भाव और मूलतः एक से अधिक भाषाओं के इस्तेमाल के विचार को स्वीकार करना तथा उसे रोज़मर्रा के जीवन में स्थान देना ही सही मायनों में बहुभाषिकता है।

भारत में एकभाषावाद के प्रचलन की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

यद्यपि भारत में एकभाषावाद के प्रचलन के परिप्रेक्ष्य में बहुत से कारको पर प्रकाश डाला जा सकता है, जिन्होने भाषाई विविधता को दरकिनार करते हुए एकभाषिता को स्वीकृत मानक बना दिया, फिर भी उनमें से सर्वप्रमुख कारण है-''भारत पर अंग्रेज़ो का आधिपत्य स्थापित हो जाना।' भारत में जब अंग्रेज़ो ने अपना औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित कर लिया या यूं कहें कि भारत को अपना गुलाम बना लिया, तभी से उन्होने भारत में अपनी भाषा-संस्कृति को भारतीयों पर थोपने का प्रयास करना शुरू कर दिया था। हालांकि प्रारम्भ में अंग्रेजों को भारत में शासन करने के लिए ऐसे द्विभाषीय बाबू वर्ग की जरूरत थी जो उनको शासन करने में सहायक की भूमिका अदा कर सके, फलतः कलकत्ता में भारतीय भाषाओं के अध्ययन हेतु फोर्ट विलियम कॉलेज का निर्माण करवाया गया परंतु बाद में अंग्रेज़ो ने अपनी भाषा नीति में परिवर्तन करके अंग्रेज़ी को ही भारत की एकमात्र सरकारी भाषा घोषित कर दिया। अधिकांश अंग्रेज़ अधिकारियों ने भारतीय भाषाओं व भारत की संस्कृति को बहुत ही हेय दृष्टि से देखा, फलस्वरूप, वे पारम्परिक एवं सांस्कृतिक तथ्य व जानकारियां जो इन भाषाओं द्वारा व्यक्त की जाती थी, उन्हें भी गलत व मनगढ़त ठहरा दिया गया। यहाँ लॉर्ड मैकाले की भाषा नीति का उल्लेख करना आवश्यक प्रतीत होता है। भारत के परिप्रेक्ष्य में लॉर्ड मैकाले के विचार थे कि अरबी एवं संस्कृत जैसी सांस्कृतिक भाषाओं को दी जाने वाली प्रशासनिक एवं वित्तीय सुविधाएं समाप्त कर देनी चाहिए तथा इस धन को पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान व अंग्रेज़ी भाषा एवं साहित्य पर खर्च करना चाहिए तथा अंग्रेज़ी साहित्य एवं इतिहास को अनिवार्य विषय बनाने के साथ ही शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी बना देना चाहिए। लॉर्ड मैकाले का विचार था कि ऐसा करना प्रशासन और भारतीय जनता दोनों के लिए ही लाभदायक होगा। परंतु, वास्तव में वह इस माध्यम से भारतीय जनता के बीच एक ऐसा लिपिक वर्ग तैयार करना चाहता था जो लहू एवं रंग से तो भारतीय हो परंतु पसंद, विचार, बुद्धि, नैतिकता, भाषा-भूषा से ब्रिटिश अंग्रेज़ हो, जिसमें वह काफी हद तक सफल भी हुआ। चूँकि उपनिवेशकों को किसी भी हाल में अपनी भाषा एवं संस्कृति की श्रेष्ठता सिद्ध करनी थीं। इसके लिए शिक्षा प्रणाली में हस्तक्षेप से बेहतर कदम भला और क्या हो सकता था ? यही वजह है कि हम समस्त औपनिवेशिक देशों में स्थानीय भाषाओं में शिक्षण और उन सब भाषाओं की स्थिति इतनी निराशाजनक पाते हैं। हमको समझना चाहिए कि कोई भी भाषा अपने में पूर्ण या अपूर्ण नहीं होती बल्कि तत्कालीन युग की राजनीति व सत्ता-संबंध ही किसी भाषा विशेष के मान-सम्मान को घटाते-बढाते रहते है। इसतरह, भाषा का सत्ता व राजनीति से गहरा संबंध होता है। सत्ता और राजनीति ने ही किसी भाषा को शीर्ष पर पहुंचाया है तो किसी भाषा के समूचे अस्तित्व के विलुप्त होने में महत्पूर्ण भूमिका भी निभाई है। उदाहरणार्थ, मुग़ल कालीन भारत में फारसी भाषा को राजभाषा होने का गौरव प्राप्त था, अतः मुग़ल काल में फारसी भाषा को फलने फूलने का उचित वातावरण प्राप्त हुआ, परन्तु जब सत्ता परिवर्तित हो गयी तथा भारत में अंग्रेज़ो का आधिपत्य स्थापित हो गया तब फारसी भाषा का स्थान अंग्रेज़ी ने ग्रहण कर लिया। स्पष्ट है कि प्रायः अभिजात्य वर्ग द्वारा प्रयुक्त भाषा ही मानक भाषा का दर्जा प्राप्त किए हुए होती है। चूंकि अंग्रेज़ी भारत में शासकों की भाषा रही है, अतः आज भी अंग्रेज़ी सभ्यता व संस्कृति से प्रभावित कुछ लोग अंग्रेज़ी को भारत में सभ्य

लोगो की भाषा जबकि हिंदी को गवारो व चपरासियों की भाषा कहकर संबोधित करते हैं तथा अंग्रेज़ी के प्रयोग मात्र को ही आत्म-गौरव का विषय समझते हैं। आज भारत में अंग्रेज़ी इस प्रकार पढ़ी-पढ़ाई जाती है मानो हम सब लंदन के निवासी हो। अंग्रेज़ी के अनुराग में हम इतने अधिक अनुरक्त हो गए कि हमने अंग्रेज़ी को अतिथि बनाने के स्थान पर गृहस्वामिनी ही बना डाला है।

भारत में बहुभाषिकता – एक अभिशाप या वरदान ?

भारत एक बहुभाषा-भाषी देश है और हम सभी मूलतः बहुभाषी हैं। यद्यपि परिवार, समुदाय, क्षेत्रीय जन व्यवहार व शिक्षा आदि विभिन्न संदर्भों में भारत में भाषा का विश्लेषण एक जटिलता ज़रूर प्रदर्शित करता है लेकिन भारतीय समाज हमेशा से ही इसे बड़ी सहजता से ग्रहण करता आ रहा है। जब हम कहते हैं कि 'चार कोस पर पानी बदले आठ कोस पर वाणी' तो इसका सीधा सा अर्थ यह हुआ कि चार कोस की दूरी पर रहने वाले व्यक्ति आठ कोस की दूरी पर रहने वाले व्यक्तियों के साथ परस्पर संवाद उचित ढंग से स्थापित नहीं कर पाते होगे क्योंकि जैसाकि लोकोक्ति से चरितार्थ होता है कि आठ कोस की दूरी पर तो वाणी परिवर्तित हो जाती है परंतु देखा गया है कि वे लोग परस्पर दोनों बोलियों में संवाद करने की क्षमता रखते हैं। जिसप्रकार एक गांव की बोली अपने सीमावर्ती दूसरे गांव की बोली से अलग होकर भी दूसरे समुदाय में बोधगम्य होती है और जिसप्रकार आस-पास के गांव आपसी व्यवहार के लिए उस बोली को बिना किसी अहम के स्वीकार करते हैं, उससे सिद्ध होता है कि भारत में बिना किसी विवाद के बहुभाषिकता प्रसार लेती रही है। यदि इस सिद्धांत को और विस्तृत किया जाए तो हमको ज्ञात होगा कि निकट के सीमावर्ती राज्यों व देशों की जनता भी सीमा क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के सहारे उनकी भाषा से तालमेल बिठा संवाद स्थापित सकती है। अतः सीमा क्षेत्र में चाहे प्रदेश का हो या देश का, निवास करने वाले लोग स्वभावत: द्विभाषी/ बहुभाषी होते हैं।

बहुभाषिक समाज में विभिन्न भाषा भाषी लोग एक दूसरे की भाषाओं को प्रभावित करते हैं और एक ही भाषा के विभिन्न रूप समाज में प्रचलित हो जाते है। उत्तर प्रदेश तथा बिहार से मुंबई में आए हुए लोगों की हिंदी भाषा के साथ मराठी के सहयोग से एक नई भाषा उत्पन्न हुई है। भाषा विज्ञान की दृष्टि से इसे पिजिन भाषा कहा जा सकता है। मुंबईया हिंदी का एक उदाहरण है -"अपुन पूछता ए यार राजा , तू कोई सपना वपना नई देखने को मांगता क्या ? अक्खा मुंबई सपनों में बसता । ऐसा च होता है।" इसीप्रकार बंगाल में बसे मारवाड़ियों की हिंदी पर बांग्ला के प्रभाव स्वरूप एक नई हिंदी प्रकट हुई है जहां एक, दो, तीन की जगह क्रमशः एक ठो, दो ठो, तीन ठो बोलने का रिवाज है। उर्दू और तेलुगु मिश्रण से हैदराबाद के इलाके में हिंदी ने एक नया रूप ग्रहण किया, जिसे दक्खिनी हिंदी कहा गया है।

सच तो यह है कि भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में हमारा काम किसी एक भाषा के सहारे चल ही नहीं सकता। हमे अपनी बात बाकी लोगों तक पहुंचाने के लिए, उनके साथ संवाद स्थापित करने के लिए एक भाषा से दूसरी भाषा के बीच आवाजाही करनी ही पड़ती है। आज हिन्दुस्तान का लगभग हर सुशिक्षित बहुभाषी है, जो अपनी मातृभाषा के अलावा हिंदी, अंग्रेजी तथा अन्य भाषाएँ सीखता व प्रयोग करता है क्योंकि भारत में लगभग प्रत्येक क्षेत्र में हमको बहुभाषिकता के होते हैं। आज हिन्दुस्तान में हमको बहुभाषिकता मुख्यतः निम्नलिखित क्षेत्रों में दिखाई देती है -

ईमानदारी से देखे तो बहुभाषिकता को आज के दौर में वरदान समझा जाना चाहिए, परन्तु जब बात शिक्षा की आती है तब भारत में यही बहुभाषिकता दुर्भाग्यवश एक अभिशाप समझी जाने लगती है। हालाँकि यह धारणा भ्रामक है परन्तु फिर भी भारत में प्राय: शिक्षा के सन्दर्भ में बहुभाषिकता को एक संसाधन के रूप में देखने के बजाए एक समस्या की तरह देखा जाता है। हालाँकि यह बात पूर्णतः सत्य है कि बहुत समय तक यह विश्वास किया जाता रहा है कि द्विभाषिकता या बहुभाषिकता का

संज्ञानात्मक वृद्धि और शैक्षिक-संप्राप्ति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है तथा कक्षा में अलग-अलग भाषाओं के इस्तेमाल से बच्चों को उलझन होती है जबकि स्थिति इसके ठीक विपरीत है। हाल में हुए कुछ अध्ययनों (जैसे पील और लैमबर्ट 1962, गार्डनर और लैमबर्ट 1972, कमिंस और स्वेन 1986 आदि) ने यह दावा किया है कि द्विभाषिकता और संज्ञानात्मक विकास में सकरात्मक रिश्ता है। विद्वानों ने यह सिद्ध किया है कि द्विभाषिकता या बहुभाषिकता किसी भी व्यक्ति के ज्ञान एवम् व्यक्तित्व के विकास के लिए बहुत आवश्यक है तथा बच्चों में कई भाषाओं का एक साथ सीखना किसी प्रकार की समस्या नहीं है। एन.सी.ई.आर.टी. के ''भारतीय भाषाओं का शिक्षण'' आधार पत्र में भी बहुभाषावाद के महत्व को उजागर करते हुए इस बात का उल्लेख किया गया है कि दो या दो से अधिक भाषा बोलने वाले बच्चे न केवल अन्य भाषाओं पर अच्छा नियंत्रण रखते हैं, बल्कि अकादमिक स्तर पर भी वे ज़्यादा रचनात्मकता दिखाते हैं, साथ ही उनमें ज़्यादा सामाजिक सहिष्णुता भी पाई जाती है। कक्षा में बहुभाषी माहौल बच्चों को अपनी बात रखने में सहजता देता है। ऐसा माहौल सभी बच्चों को दूसरे की भाषा और विचारों का सम्मान करना भी सिखाता है। यूं तो इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि विभिन्न भाषा-शोध बहुभाषावाद के महत्व को उजागर करते है, फिर भी हमारी कक्षाओं में विशेषकर भाषा की कक्षाओं में एकभाषावाद का प्रचलन ही मुख्यतः देखने को मिलता है। अधिकांशतः हमारी कक्षाओं में शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच का संवाद एक ही दिशा (वन वे) में होता है जिसमें शिक्षक बोलता है और विद्यार्थी सुनते है। बच्चे जो भाषा घर एवं अपने परिवेश में इस्तेमाल करते हैं, वे विद्यालयों में उपेक्षित समझी जाती है तथा उनका प्रयोग विद्यायल में हेय दृष्टि से देखा जाता है। भाषा में विविधता, लक्षित भाषा (विशेषकर अंग्रेज़ी भाषा) सीखने की राह में एक बाधा समझी जाती है। स्कूलों में पढ़ाए जाने वाले विभिन्न विषय उस विशिष्ट भाषा (मुख्यतः अंग्रेज़ी भाषा) के माध्यम से ही पढ़ाए जाते हैं एवं भाषा की कक्षा में उस लक्षित भाषा को छोड़कर अन्य भाषाओं का प्रयोग वर्जित माना जाता है। हमको ज्ञात है कि अंग्रेज़ी का अंतर्राष्ट्रीय दर्जा अंग्रेज़ी को विद्यालयों में बनाए रखने के लिए आकर्षित करता है। हिंदी भाषी राज्य भी अंग्रेज़ी के मोह से उबर गए है ऐसा दिखाई नहीं देता। इन राज्यों में अंग्रेज़ी माध्यम के निजी विद्यालयों की भरमार है जिनमें हिंदी तथा अन्य प्रांतीय भाषाओं के प्रति सकारात्मक माहौल का अभाव पाया जाता है तथा जहां छोटी उम्र से ही बच्चों में हिंदी तथा अन्य प्रांतीय भाषाओं के प्रति हीन भावना भर दी जाती है। इन निजी स्कूलों में आम चलन होता है कि विद्यालयों की परिधि में अंग्रेज़ी के सिवा किसी अन्य भाषा में बात किए जाने पर दंड के रूप में फाइन लिया जाए तथा अभिभावक से शिकायत की जाए। इसप्रकार, इन विद्यालयों में बच्चे अंग्रेज़ी भाषा सीखने के साथ-साथ दूसरी भाषाओं के कमतर होने, उनके हीन होने का भाव भी ग्रहण करते हैं, साथ ही बच्चों में उनकी अपनी भाषा के प्रति नकारात्मक छवि (स्टिरियोटाइप) और भी अधिक पुख्ता हो जाती है। फलतः भाषा भी उनके सामाजिक शोषण को बढ़ावा देती है। द्रष्टव्य है कि बहुभाषा-भाषी भारत में यदि विद्यालय ही एक भाषा को श्रेष्ठ व दूसरी भाषा को निम्न होने का भाव बच्चों में विकसित करने लगे तो निश्चय ही स्थिति बिगड़ेगी ही। इसप्रकार, हम यह कह सकते है कि बहुभाषी समाज में भाषाई विविधता एक सिर दर्द नहीं बल्कि एक संसाधन है, परन्तु यह देश का दुर्भाग्य ही है कि कैसे हमारी शिक्षा व्यवस्था ने हमारे समाज की सबसे बड़ी विशेषता - बहुभाषिकतावाद से मिलते आ रहे फायदों को दबाने का काम किया है जबकि, हमारी शिक्षा व्यवस्था को इसे दबाने के बजाए इसे बनाए रखने और प्रोत्साहित करने का भरपूर प्रयास करना चाहिए।

निष्कर्ष

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि बहुभाषिकता किसी भी समाज के लिए समस्या नहीं बल्कि संसाधन पर्याय है। भाषिक या धार्मिक या जातीय

विविधता संपूर्णता के अलग-अलग हिस्सों को महत्व देती है और प्रत्येक मनुष्य के महत्व को प्रमाणित करती है। विविधता के द्वारा ही प्रत्येक हिस्से की सहायता से निर्मित एकता की सही पहचान होती है। वैसे भी, वर्तमान युग भूमंडलीकरण का युग है। वर्तमान युग में पूरी दुनिया एक ग्लोबल-विलेज के रूप में परिवर्तित हो चुकी है। वैश्वीकरण ने भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी लोगों को एक-दूसरे की भाषा को जानने-समझने के लिए प्रेरित किया है। वर्तमान में ऐसा देखा जा रहा है कि आज विश्व के अनेक देशों के लोग अपने-अपने देशों की मातृभाषा/राजभाषा सीखने के अलावा विभिन्न देशों की भाषाएं जैसे हिंदी, फ्रेंच, स्पेनिश, जर्मन, लैटिन, चीनी, कोरियाई आदि भी सीख रहे हैं। अतः कहना अनुचित न होगा कि वैश्वीकरण के युग में बहुभाषिकता एक शौक मात्र नहीं बल्कि ज़रूरत बन चुकी है तथा बहुभाषिकता को आज के दौर में एक वरदान ही समझा जाना चाहिए।

संदर्भ सूची

1. गीतांजली, 2018, भाषा शिक्षण एवं बहुभाषिकता पर शिक्षक-प्रशिक्षकों का दृष्टिकोण, प्राथमिक शिक्षक, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , नई-दिल्ली,
2. श्रीवास्तव लक्ष्मी, 2018, भारत में बहुभाषिकता तथा हिंदी भाषा शिक्षण की चुनौतियां एवं समाधान, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , नई-दिल्ली,
3. कुमार सुमन, 2014, लघु, अल्पसंख्यक और आदिवासी भाषाएं तथा भाषा-नीति व बहुभाषिकता, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , नई-दिल्ली,
4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् 2006, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005, एन.सी.ई.आर.टी.नई दिल्ली,
5. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् 2006, भारतीय भाषाओं का शिक्षण राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, एन.सी.ई.आर.टी.,नई दिल्ली,
6. सिंह चित्रा, 2018, बहुभाषिकता: गांधी जी की भाषा नीति और भाषा चिंतन, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई-दिल्ली